मीराबाई

Meera Bai

कृष्णभक्ति के कवयित्रियों में मीराबाई का स्थान सर्वश्रेष्ठ है। माना जाता है। कि मीराबाई का जन्म सन् 1563 ई. में राजस्थान के मारवाड़ जिलान्तर्गत मेवाच में हुआ था। मीराबाई श्रीकृष्ण के लिए मधुर-मधुर गीत गाती रहीं। कहा जाता है कि बचपन में एक बार मीराबाई ने खेल-ही-खेल में भगवान श्रीकृष्ण की मूर्ति को हृदय से लगाकर उसे अपना दूल्हा मान लिया। तभी से मीराबाई आजीवन श्रीकृष्ण को अपने पति के रूप में मानते हुए प्रसन्न करने के लिए मधुर-मधुर गीत गाती रही। श्रीकृष्ण को पति मानकर अपना संपूर्ण जीवन व्यतीत कर देने वाली मीराबाई को जीवन में अनेक कष्ट झेलने पड़े थे, फिर भी मीराबाई ने अपनी इस भक्ति-भावना का निर्वाह करने से कभी मुह नहीं मोड़ा।

मीराबाई का जीवन पारलौकिक था। यद्यपि मीराबाई के आरंबिक जीवन में उन्हें लौकिक जीवन जीना पड़ा। फिर भी पति भोजराज की अल्पायु मृत्यु हो जाने के कारण मीराबाई का मन बैरागी बन गया। मीराबाई को सामाजिक बाधाओं और कठिनाइयों को झेलने के लिए अपने आराध्य देव श्रीकृष्ण की बार-बार शरण लेनी पड़ी थी। कहा जाता है कि अपने अंत समय तक मीराबाई ने विभिन्न प्रकार की साधनाएँ की हैं।

मीराबाई द्वारा रचित काव्य-रूप का जब अध्ययन किया जाता है तो हम यह देखते हैं कि वे हृदय-पक्ष से सभी स्वरूपों में प्रवाहित थीं। जिनमें सरलता और स्वच्छंदता है साथ-साथ भक्ति के भी विविध भाव हैं। आत्मानुभूति और निष्ठता की तीव्रता है। श्रीकृष्ण की अनन्य उपासिका होने के कारण वे अपना सारा कार्य उन्हें ही समर्पित करती थीं। वे श्रीकृष्ण की मनोहर मूर्ति को अपने हृदय में बसायी हुई कहतीं

मेरे तो गिरिधर गोपाल, दूसरा न कोई।

जाके सिर मोर मुकुट, मेरी पति सोई।।

इस दोहे को गंभीरतापूर्वक पढ़ने पर हम देखेंगे कि मीराबाई की काव्यानुभूति आत्मनिष्ठ और अनन्य तो है ही साथ ही सहजता के साथ गंभीरता भी है। वह अपने इष्टदेव श्रीकृष्ण

के प्रति सर्व-समर्पण के भाव से अपने को सर्वथा प्रस्तुत करती है। कृष्ण की मनमोहक मूर्ति तो मीराबाई की आँखों में बसी थी- वह कहती थीं

बसो मेरे नयनन में नंदलाल।।

मोर मुकुट मकराकृत, अरुन तिलकदिए भाल।

मोहनमूरति सावली सूरति, नैना बने विसाल।

अधर सुधारस मुरली राजति, उर बैजन्ती माल।

छुद्र-घटिका कटि तट सोभित, नूपुर सबद रसाल।

मीरा प्रभु संतन सुखदाई, भगत बछल गोपाल।।

कहा जाता है कि अन्य भक्त-कवियों की तरह ही मीराबाई के काव्य में भी गुरुमहिमोल्लेख है। वे अपने इष्ट का नाम अपने सद्गुरु की कृपा से ही प्राप्त करती थीं। सद्गुरु सत्की नाव को पार लगाने वाला वही केवल केवट होता है। इस भव सागर से पार वही लगा सकता है। मीराबाई को सद्गुरु पर अटूट विश्वास है, सत्गुरु के लिए मीराबाई कहती हैं. "

पायो जी मैंने राम रतन धन पायो।

वस्तु अमोदक दी मेरे सतगुरु किरपा कर अपनायो।

जन्म-जन्म की पूंजी पाई, जग में सभी खोवायो।

खरच नहिं, कोई चोर न लेवे, दिन-दिन बढ़त सवायो।

सत की नाव, खेवटिया सतगुरू भवसागर तर आयो।।

मीरा के प्रभुगिरिधर नागर, हर2 जस गायो।।

मीराबाई का काव्य लौकिक और पारलौकिक दोनों ही दृष्टियों से श्रेष्ठ और रोचक है। भाषा-शैली के अंतर्गत कहा जाए तो हम निःसंकोच कह सकते हैं कि मीराबाई ने कहावतों और मुहावरों के लोक प्रचलित स्वरूप को अपनाया है। रसों और अलंकारों का भी समुचित

उपयोग किया है। | हम कह सकते हैं कि मीराबाई एक सहज और सरल भक्तिधारा के स्रोत से उत्पन्न हुई विरहिणी कवयित्री हैं।

मीराबाई कि निम्न पंक्ति बहुचर्चित हुई थी –

मेरे तो गिरिधर गोपाल, दूसरोनकोई।।